॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥

॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः॥

श्रीराधा-कृष्ण

कृपा-कटाक्ष स्तोत्र

श्रीगोपाल स्तवराज, श्रीराधा चालीसा, श्रीगोपाल चालीसा,
श्रीराधा कृष्ण स्तुति, दोहावली सहित

* श्रीसर्वेश्वरो जयति *
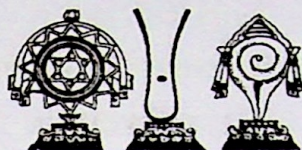
॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ॥

श्रीराधा-कृष्ण
कृपा-कटाक्ष स्तोत्र

(श्रीगोपालस्तवराज, श्रीराधाचालीसा, गोपालचालीसा, दोहावली सहित)

सम्पादक--

पं० वासुदेवशरण उपाध्याय

संकलनकर्ता--

मदनमोहनशरण

प्रकाशक--

अ० भा० जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यचार्यपीठ

निम्बार्कतीर्थ, जि० अजमेर (राजस्थान)

श्रीकृष्णजन्माष्टमी महोत्सव

वि० सं० २०७६ श्रीनिम्बार्काब्द ५११४

पुस्तक प्राप्ति स्थान--
अखिल भारतीय जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ
निम्बार्कतीर्थ

प्रकाशन सेवा-
ठा० श्रीरिछपालसिंहजी शेखावत
हुडील, जिला-नागौर (राज.)

तृतीयावृत्ति--
दो हजार

मुद्रक--
श्रीनिम्बार्क - मुद्रणालय
निम्बार्कतीर्थ

न्यौछावर
दश रुपये

* पुरोवाक् *

वृन्दावनविहारी श्रीश्यामाश्याम की नित्य-लीला का आस्वादन साधन से नहीं, श्रीयुगलवर्य की कृपा से सम्भव है-- **''एक कृपा करि होय से होई, साधन सिद्ध रह्यौ नहीं कोई ।''** (महावाणी) कृपाप्राप्ति के उपाय धर्मशास्त्रों, धर्माचार्यों की वाणी आदि सद्ग्रन्थों में उपलब्ध हैं । उन्हीं में **''श्रीराधा-श्रीकृष्ण कृपा कटाक्ष स्तोत्र एवं श्रीगोपालस्तवराज''** भी है, जिनका नित्य पाठ करने से साधक अति शीघ्र श्रीयुगल कृपा का भाजन बन सकता है और श्रीहरि-प्रिया चरणरज-प्राप्ति की आकांक्षा को पूर्ण कर सकता है--**''कृपा कटाछि चितै श्रीहरिप्रिया, तब हो सकै चरन-रज लाभ ।''** (महावणी)

इसी प्रकार भावुक भक्त की दिव्य अभिव्यक्ति ''श्रीराधा चालीसा'' - ''श्रीगोपाल-चालीसा'' में है, जिनके पठन-मनन से पाठकों का अन्तःकरण निश्चय ही प्रेम से प्लावित होगा । प्रस्तुत ग्रन्थ से संकलित श्रीवृन्दावननिष्ठा, श्रीयुगलनिष्ठा, नामनिष्ठा, भजननिष्ठा आदि के कई महत्वपूर्ण दोहा हैं जो साधक-सिद्ध सभी के लिये श्रेयस्कर हैं ।

रसिकचरणरजाकांक्षी--

जयकिशोरशरण

* श्रीराधाकृपाकटाक्ष स्तोत्र *

मुनीन्द्रवृन्दवन्दिते त्रिलोकशोकहारिणि,
प्रसन्नवक्त्रपङ्कजे निकुञ्जभूविलासिनि ।
व्रजेन्द्रभानुनन्दिनि व्रजेन्द्र सूनुसङ्गते,
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ।।१।।
अशोकवृक्षवल्लरी वितानमण्डपस्थिते,
प्रबालज्वालपल्लव प्रभारुणाङ्घ्रिकोमले ।
वराभयस्फुरत्करे - - प्रभूतसम्पदालये,
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ।।२।।
अनङ्गरङ्गमङ्गल प्रसङ्गभङ्गुरभ्रुवां,
सुविभ्रमं ससम्भ्रमं दृगन्तबाणपातनैः ।
निरन्तरं वशीकृतप्रतीतनन्दनन्दने,
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ।।३।।
तड़ित्सुवर्णचम्पकप्रदीप्तगौरविग्रहे,
मुखप्रभापरास्तकोटिशारदेन्दुमण्डले ।
विचित्रचित्रसञ्चरच्चकोरशावलोचने,
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ।।४।।
मदोन्मदातियौवने प्रमोदमानमण्डिते
प्रियानुरागरञ्जिते कलाविलासपण्डिते ।

अनन्यधन्यकुञ्जराज-कामकेलिकोविदे

कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ॥५॥

अशेषहावभावधीरहीरहारभूषिते,

प्रभूतशातकुम्भकुम्भ कुम्भिकुम्भसुस्तनि ।

प्रशस्तमन्दहास्यचूर्णपूर्णसौख्यसागरे,

कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ॥६॥

मृणालबालवल्लरी तरङ्गरङ्गदोर्लते,

लताग्रलास्यलोलनील लोचनावलोकने ।

ललल्लुलन्मिलन्मनोज्ञ मुग्धमोहनाश्रये,

कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ॥७॥

सुवर्णमालिकाञ्चिते त्रिरेखकम्बुकण्ठगे,

त्रिसूलमङ्गलीगुणत्रिरत्नदीप्तिदीधिति ।

सलोलनीलकुन्तले प्रसूनगुच्छगुम्फिते,

कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ॥८॥

नितम्बबिम्बलम्बमानपुष्पमेखलागुणे,

प्रशस्तरत्नकिंकिणी कलापमध्यमञ्जुले ।

करीन्द्रशुण्डदण्डिकावरोहसौभगोरुके,

कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ॥९॥

अनेकमन्त्रनादमञ्जु-नूपुरारवस्खलत्,

समाजराजहंसवंश-निक्वणातिगौरवे ।

विलोलहेमवल्लरी विडम्बिचारुचंक्रमे,

कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ।।१०।।

अनन्तकोटिविष्णुलोक-नम्रपद्मजार्चिते,

हिमाद्रिजा-पुलोमजा-विरञ्चिजावरप्रदे ।

अपारसिद्धिवृद्धिदिग्ध-सत्पदाङ्गुलीनखे,

कदाकरिष्यसीह मां कृपाकटाक्षभाजनम् ।।११।।

मखेश्वरि क्रियेश्वरि स्वधेश्वरि सुरेश्वरि,

त्रिवेदभारतीश्वरि प्रमाणशासनेश्वरि,

रमेश्वरि क्षमेश्वरिप्रमोदकाननेश्वरि,

व्रजेश्वरि व्रजाधिपे श्रीराधिके नमोस्तु ते ।।१२।।

इतीदमद्भुतस्तवं निशम्य भानुनन्दिनी,

करोतु संततं जनं कृपाकटाक्षभाजनम् ।

भवेत्तदैव सञ्चित-त्रिरूपकर्मनाशनं,

लभेत्तदाव्रजेन्द्रसूनु-मण्डलप्रवेशनम् ।।१३।।

राकायां च सिताष्टम्यां दशम्यां च विशुद्धया ।

एकादश्यां त्रयोदश्यां यः पठेत्साधकः सुधीः ।।

यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोति साधकः ।

राधाकृपाकटाक्षेण भक्तिः स्यात् प्रेमलक्षणा ।।

ऊरुमात्रे नाभिमात्रे हृन्मात्रे कण्ठमात्रके ।

राधाकुण्डजले स्थित्वा यः पठेत्साधकःशतम् ।।

तस्य सर्वार्थसिद्धिःस्यात् वाञ्छितार्थफलंलभेत् ।
ऐश्वर्यं च लभेत्साक्षात्दृशा पश्यति राधिकाम् ।।
तेन सा तत्क्षणादेव तुष्टा दत्ते महावरम् ।
येन पश्यति नेत्राभ्यां तत्प्रियं श्यामसुन्दरम् ।।
नित्य-लीलाप्रवेशं च ददाति श्रीव्रजाधिपः ।
अतः परतरं प्राप्यं वैष्णवानां न विद्यते ।।

।। विधि ।।

भावार्थ-इस स्तोत्र से श्रीराधाकृष्ण का साक्षात्कार होता है, उसकी विधि इस प्रकार है कि (गोवर्धनपर्वत के निकट) श्रीराधाकुण्ड के जल में जंघाओं तक या नाभि पर्यन्त या छाती तक या कण्ठ तक जल में खड़े होकर इस स्तोत्र का १०० बार पाठ करे । इस प्रकार कुछ दिन पाठ करने पर सम्पूर्ण मनोवांछित पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं । ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है । दर्शनार्थी भक्तों को इन्हीं से साक्षात् श्रीराधाजी का दर्शन होता है । श्रीराधाजी प्रकट होकर प्रसन्नता-पूर्वक महान् वरदान देती हैं । (अथवा अपने चरणों का महावर (जावक) भक्त के मस्तक पर लगा देती है) वरदान में केवल ''अपनी प्रिय वस्तु दो'' यही मांगना चाहिए । तब तत्काल ही श्यामसुन्दर प्रकट होकर दर्शन देते हैं। प्रसन्न होकर श्रीव्रज़राज कुमार नित्य-लीलाओं में प्रवेश प्रदान करते हैं। इससे बढकर वैष्णवों के लिए कोई भी वस्तु नहीं है । किसी-किसी को राधाकुण्ड के जल में १०० पाठ करने पर एक ही दिन में दर्शन हो जाता है । किसी-किसी को दो महीनों में होता है । इसलिए जब तक दर्शन न हो पाठ करते रहें । किसी-किसी को अपने घर में ही १०० पाठ नित्यप्रति करने से कुछ दिनों में इष्ट प्राप्ति हो जाती है ।

* श्रीकृष्णकृपाकटाक्ष स्तोत्र *

भजे व्रजैकमण्डनं समस्तपापखण्डनं
सुभक्तचित्तरञ्जनं, सदैव नन्दनन्दनम् ।
सुपिच्छगुच्छमस्तकं सुनादवेणुहस्तकं
अनङ्गरङ्गसागरं नमामि कृष्णनागरम् ।।१।।

मनोजगर्वमोचनं विशाललोललोचनं,
विधूतगोपशोचनं नमामि पद्मलोचनम् ।
करारविन्दभूधरं स्मितावलोकसुन्दरं
महेन्द्रमानदारणं नमामि कृष्णवारणम् ।।२।।

कदम्बसूनुकुण्डलं, सुचारुगण्डमण्डलं
व्रजाङ्गनैकवल्लभं नमामि कृष्णदुर्लभम् ।
यशोदया समोदया सगोपया सनन्दया
युतं सुखैकदायकं नमामि गोपनायकम् ।।३।।

सदैव पादपङ्कजं मदीयमानसे निजं
दधानमुत्तमालकं नमामि नन्दबालकम् ।
समस्तदोषशोषणं समस्तलोकपोषणं
समस्तगोपमानसं नमामि नन्दलालसम् ।।४।।

भुवो भरावतारकं भवाब्धिकर्णधारकं
यशोमतीकिशोरकं नमामि चित्तचोरकम् ।

दृगन्तकान्तभङ्गिनं सदासदालिसङ्गिनं

दिने-दिने नवं-नवं नमामि नन्दसम्भवम् ।।५।।

गुणाकरं सुखाकरं कृपाकरं कृपापरं

सुरद्विषन्निकन्दनं नमामि गोपनन्दनम् ।

नवीन गोपनागरं नवीनकेलि-लम्पटं

नमामि मेघसुन्दरं-तडित्प्रभालसत्पटम् ।।६।।

समस्तगोपमोहनं हृदम्बुजैकमोदनं

नमामि कुञ्जमध्यगं प्रसन्न भानुशोभनम् ।

निकामकामदायकं दृगन्तचारुसायकं

रसालवेणुगायकं नमामि कुञ्जनायकम् ।।७।।

विदग्धगोपिकामनो मनोज्ञतल्पशायिनं

नमामि कुञ्जकानने प्रवृद्धवन्हिपायिनम् ।

किशोरकान्तिरंजितं दृगंजनं सुशोभितं

गजेन्द्रमोक्षकारिणं नमामि श्रीविहारिणम् ।।८।।

यदा तदा यथा तथा तथैव कृष्णसत्कथा,

मया सदैव गीयतां तथा कृपा विधीयताम् ।

प्रमाणितं स्तवद्वयं पठन्ति प्रातरुत्थिताः

त एव नन्दनन्दनं मिलन्ति भाव संस्थिताः ।।९।।

❊ श्रीगोपालस्तवराजः ❊

(सानुवाद)

अनुवादकः- श्रीवासुदेवशरण उपाध्याय

प्राचार्य--श्रीसर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय, निम्बार्कतीर्थ-

सलेमाबाद जि० अजमेर (राजस्थान)

ॐ अस्य श्रीगोपालस्तवराजस्य श्रीनारद ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीकृष्णः परमात्मा देवता श्रीकृष्णप्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः।

श्रीनारदपञ्चरात्रीय ज्ञानामृतसार के चतुर्थरात्र-प्रकरण में परिवर्णित श्रीगोपालस्तवराज अत्यन्त मनोहर स्तोत्र है, जिसमें श्रीकृष्ण की निकुञ्जलीला एवं व्रजलीला के स्वरूप व्यक्त हुए हैं। इस स्तोत्र के ऋषि श्रीदेवर्षि नारद, छन्द अनुष्टुप् और भगवान् श्रीकृष्ण देवता हैं। उन्हीं श्रीकृष्ण की प्रीति हेतु इसका प्रयोग है। देवर्षि नारदजी ने महर्षियों के समक्ष परमतत्त्व, मोक्ष, भोग, योग एवं विषय (संसार) इन पांच प्रकारों के ज्ञान का उपदेश किया है। ज्ञान को रात्र कहा गया है। अतः नारदपञ्चरात्र नाम प्रसिद्ध हुआ है। नारदपञ्चरात्र वैष्णवचतुःसम्प्रदाय का परम प्रामाणिक आगम ग्रन्थ है। यह चतुर्वेद समन्वित है। आगमशास्त्र को तन्त्र कहते हैं। अनेक तन्त्र शास्त्रों में

नारदपञ्चरात्र का सर्वोत्कृष्ट स्थान है । श्रीगोपालस्तवराज के आरम्भ में विनियोग के पश्चात् भगवान् बालकृष्ण के ध्यान का मधुरतम वर्णन है । तद्यथा--ध्यानम्

सजलजलदनीलं दर्शितोदारशीलं
करतलधृतशैलं वेणुवाद्ये रसालम् ।
व्रजजनकुलपालं कामिनीकेलिलोलं
तरुणतुलसिमालं नौमि गोपालबालम् ॥

वर्षाकालिक मेघ के समान नील कान्ति है जिनकी जिन्होंने अपने शील स्वभाव को उदार भाव से प्रगट किया है, देवराज इन्द्र का मानमर्दन करते हुए जिन्होंने निज करकमल में गिरिराज गोवर्द्धन को धारण किया, जो वंशी बजाने में परम रसिक है अर्थात् जिनके पाणिणपद्म में वंशीदेवी नित्य विराजित हैं, समस्त व्रजवासीजनों के सर्वविध-संकटों को दूर कर उनकी रक्षा करने वाले, व्रजसीमन्तिनियों के हाव-भाव-कटाक्षरूपी विलासों का विस्तार करने में जो परमचञ्चल हैं, अधखिले तुलसी-कुन्द-मन्दार-करवीर--कमलं इन कुसुम कलियों से ग्रथित वनमाला को नित्य धारण करने वाले ऐसे गोपाल वेशधारी भगवान् सर्वेश्वर श्रीबालकृष्ण प्रभु को मैं सदा नमन करता हूँ । इस प्रकार न्यास ध्यान करके स्तोत्र-पाठ करने का विधान बताया गया है ।

नारद उवाच--

नवीननीरदश्यामं नीलेन्दीवरलोचनम् ।
वल्लवीनन्दनं वन्दे कृष्णं गोपालरूपिणम् ॥१॥

गोपालरूपिणं कृष्णं वन्दे इन पदों का १५ वें श्लोक तक सभी श्लोकों में सम्बन्ध रहेगा । देवर्षि नारदजी समस्त महर्षियों को सम्बोधित करते हुए कहने लगे हे मुनीश्वरों ! सच्चिदानन्द परब्रह्म परमात्मा क्षराक्षरातीत सर्वनियन्ता सर्वान्तर्यामी सर्वेश्वर श्रीकृष्ण के नाम-रूप-लीला-धाम का साङ्गोपाङ्ग परिवर्णन श्रुति-स्मृति सूत्रतन्त्रादि सभी शास्त्रों में उपलब्ध होता है । यहाँ पर भी अनन्त दिव्य गुण शक्तियों के साथ प्रभु के स्वरूप का वर्णन किया जा रहा है । जिनका दिव्य मङ्गलमय विग्रह वर्षा ऋतु के नवीन नील मेघों की तरह श्यामल कान्ति को लिये हुए अत्यन्त शोभायमान है, जिनके नेत्र युगल विकसित नीलकमल के समान मनोहर हैं, आह्लादिनी शक्ति भगवती श्रीराधा के प्रेमानुराग को बढाने वाले अथवा व्रजगोपियों के आनन्द को बढाने वाले गोपवेशधारी लीलापुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण को मैं सदा नमन करता हूँ ॥१॥

स्फुरद्बर्हदलोद्बद्ध-नीलकुन्तलमण्डितम् ।
कदम्बकुसुमोद्भासि-वनमालाविभूषितम् ॥२॥

मन्द-मन्द दोलायमान मयूरपंख जिनके शिरोमुकुट में आबद्ध है और उसकी आभा के सम्मिश्रण से काले-काले स्निग्ध

घूंघराले बालों के कारण मुखमण्डल की शोभा अपूर्वरूप से बढ रही है । कदम्बपुष्पगुच्छों के बीच-बीच में गूंथे होने से वनमाला की शोभा रत्नजटित मणिमय हार की तरह देदीप्यमान हो रही है, ऐसी वनमाला से विभूषित है श्रीविग्रह जिनका उन गोपवेशधारी बालकृष्ण का मैं सदा मन-वचन-कर्म से भजन करता हूँ ।

गण्डमण्डलसंसर्गिचलत्काञ्चनकुण्डलम्।
स्थूलमुक्ताफलोदार-हारोद्योतितवक्षसम् ॥३॥

कपोलमण्डल तक झूमते हुए अतएव चञ्चल ऐसे सुवर्ण निर्मित मकराकृतिकुण्डलों से अलंकृत है कर्णयुगल जिनके, मोटे-मोटे मुक्ताफलों (मोतियों) के साथ वज्रवैदूर्य-पद्मरागादि दिव्यरत्नों द्वारा निर्मित उज्ज्वल हाररूप वैजयन्ती माला से जिनका वक्षस्थल प्रदीप्त हो रहा है ऐसे मदनगोपाल बालस्वरूप गोपालकृष्ण को मैं नित्य नमन करता हूँ ॥३॥

हेमाङ्गदतुलाकोटि-किरीटोज्ज्वलविग्रहम् ।
मन्दमारुतसंक्षोभिवलिताम्बरसञ्चयम् ॥४॥

हे प्रभो ! आपके बाहुयुगल स्वर्णखचित बाजुवन्द से शोभायमान हैं, बाजुवन्द के अग्रभाग की चमक सूर्यवत् प्रकाशमान किरीट-मुकुट पर पड़ रही है, जिससे प्रत्येक अङ्ग उज्ज्वल कान्ति से उद्भासित हो रहे हैं, नीलमेघमण्डल में चमकने

वाली बिजली की तरह श्याम विग्रह पर पीताम्बर द्युति मन्द-मन्द पवन गति से तरङ्गायित हो रही है, जिससे अगणित कन्दर्प विदलित हो रहे हैं ऐसे त्रिभङ्गललित भुवनमोहन श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण का मैं सदा स्तवन करता हूँ ॥४॥

रुचिरौष्ठपुटन्यस्त-वंशीमधुरनिःस्वनैः ।
लसद् गोपालिका चेतो मोहयन्तं मुहुर्मुहुः ॥५॥

बिम्बफल सदृश अतिसुन्दर ओष्ठपटल पर रखी हुई वंशी से निकलने वाली स्वर ग्राममूर्च्छना युक्त संगीतमयी स्वर लहरी से उल्लसित गोप-सुन्दरियों के चित्त को मुहुर्मुहुः मुग्ध करते हुए जो बालसखामण्डली के साथ गोचारण करने हेतु व्रजवसुन्धरा के वन-उपवनों, कुञ्ज-उपकुञ्जों में विचरण करते हैं उन मुरलीमनोहर नन्दनन्दन श्रीकृष्ण की प्रपत्ति पूर्वक मैं वन्दना करता हूँ ॥५॥

वल्लीवीवदनाम्भोज-मधुपान मधुव्रतम् ।
क्षोभयन्तं मनस्तासां सस्मेरापाङ्गवीक्षणैः ॥६॥
यौवनोद्भिन्नदेहाभिः संसक्ताभिः परस्परम् ।
विचित्राम्बरभूषाभिर्गोपनारीभिरावृतम् ॥७॥

महारासलीला के प्रसङ्ग में आत्मस्वरूप व्रजाङ्गनाओं के तथा नित्यनिकुञ्ज में निज-आराध्या प्रेमरूपिणी श्रीराधिका के मुखमण्डल के अधरामृत पान करने में जो पङ्कजपरागलुब्ध

भ्रमर की तरह लालायित रहते हैं, अपने मधुर मन्द मुस्कान के साथ कटाक्षावलोकन से उन अनन्तानन्त व्रजवनिताओं के मन को प्रेमाकुल एवं क्षुब्ध कर देते हैं, अतएव वे गोपिकाएँ जो व्रजलीला में सम्मिलित हैं और जो नित्य-निकुञ्ज लीला में श्रीराधाजी के साथ सहचरी भाव में प्राप्त हैं वे सब दिव्य किशोरावस्थासम्पन्न होने से यौवनारम्भ के शारीरिक लक्षणों से युक्त हो गयी हैं, अतः विविध लीलाविलास में निपुण होने से परस्पर में एक दूसरी से निकटता बनाती हुई अतिमनोहर चित्र--विचित्र वेशभूषा, वस्त्राभूषणों से सुसज्जित उन गोपवधूओं द्वारा चारों ओर से घिरे हुए नित्यकिशोर मनमोहन बालमुकुन्द श्रीकृष्ण को मैं सदा भाव संवलित होकर नमन करता हूँ ॥६-७॥

प्रभिन्नाञ्जनकालिन्दी-जलकेलिकलोत्सुकम् ।
योधयन्तं क्वचिद् गोपान् व्याहरन्तं गवाङ्गणम् ॥८॥
कालिन्दीजलसंसर्गि-शीतलानिलकम्पिते ।
कदम्बपादपच्छाये स्थितं वृन्दावने क्वचित् ॥९॥

कहीं लीला विहार में काजल के चूर्ण को घोलने से मानो नीलाभ बन गया हो ऐसे यमुना-जल प्रवाह में नाना प्रकार से तैरने, डूबने आदि जल क्रीडा करने में जो निरन्तर समुत्सुक हैं, कहीं दाम-श्रीदाम-सुबल-स्तोक-मधुमङ्गल प्रभृति गोप सखाओं को परस्पर मल्लयुद्ध का अभ्यास कराने में व्यस्त हैं, कहीं धौरी धूसरादि गोवृन्द को नाम ले-लेकर वंशीरव से बुलाते

हैं, कहीं यमुना के जल कणों, पुष्पपरागों को लेकर चलने के कारण मन्द-सुगन्ध-शीतल वने त्रिविध वायु से कदम्ब कुञ्ज की तरु-लताएँ धीरे-धीरे हिल रही हैं, ऐसे श्रीधाम वृन्दावन के तमाल कदम्ब वृक्षों की सुशीतल छाया में विराजमान हैं, सखावृन्द जिनकी सर्वविध सेवा करते हैं, ऐसे व्रजवासियों के प्राणधन परमहितैषी व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण की मैं नित्य वन्दना करता हूँ ॥८-९॥

रत्नभूधरसंलग्न-रत्नासनपरिग्रहम् ।
कल्पपादपमध्यस्थं हेममण्डपिकागतम् ॥१०॥
वसन्तकुसुमामोद-सुरभीकृतदिङ्मुखे ।
गोवर्द्धनगिरौ रम्ये स्थितं रासरसोत्सुकम् ॥११॥

प्रभु के धाम का वर्णन करते हुए कहते हैं--व्रजमण्डल में यमुना-पुलिन, गोवर्धन, वृन्दावन इत्यादि जो भी श्रीहरि के लीलाविहारस्थल हैं वे सब दिव्य गोलोकधाम से ही अवतरित हैं । अतः दिव्य चिन्मय हैं । इनका प्रत्यक्ष दर्शन-अनुभव प्राकृतिक साधनों से नहीं किया जा सकता, परन्तु जिन पर प्रभु की स्वभाविक कृपा हो जाती है उन्हें ये सब दिव्य अप्राकृत स्वरूपों में दर्शन होते हैं। माता यशोदा, अक्रूर, अर्जुन आदि को विश्वरूप का और वैकुण्ठादि लोक का दर्शन हुआ था ।

गिरिराज गोवर्द्धन की शिलाएँ सभी रत्नमयी हैं, अतः गोवर्धन को रत्नभूधर-रत्नों का पर्वत कहा गया है । उसी रत्न

भूधर से लगा हुआ निकुञ्जविहारी श्रीहरि का परम मनोहर रत्नसिंहासन देदीप्यमान मणिमण्डप के मध्य कल्पवृक्ष के तले विराजित है । युगलकिशोर श्रीराधाकृष्ण सहस्रों-सहस्रों सहचरियों से सेवित नित्य नवनवायमान लीलाविहार करते हैं । यह निकुञ्ज भाव का विषय है । उसी रत्नभूधर के मणिमण्डपस्थ सुशीतल कदम्ब छाया में विराजमान श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण अनन्त गोप-गोपी-गोवृन्द से संसेवित होते हैं तब यह व्रजलीला का भाव कहा जाता है । अधिकारी भेद से उपासना भेद समझना चाहिए ।

उस गिरिराज गोवर्धन की सुरम्य तलहटी में सदा ही वसन्त ऋतु का सुखद समय रहता है । चारों ओर नव पल्लवित पुष्पित तरुलताओं की श्रेणी से पर्वतराज की अपूर्व शोभा बढ रही है । चारों दिशाएँ पुष्प परागों के आमोदि से सुरभित हैं । अनन्त गोपीमण्डल के साथ रासमण्डप में अवस्थित रासविहार करने में सदा उत्कण्ठित रहने वाले रासविहारी श्रीकृष्ण की मैं नित्य हृदय में भावना करता हूँ ॥१०-११॥

सव्यहस्ततले न्यस्तगिरिवर्यातपत्रकम् ।
खण्डिताखण्डलोन्मुक्त-मुक्तासारघनाघनम् ॥१२॥

इन्द्रमानमर्दन लीला का वर्णन करते हुए श्रीदेवर्षि नारदजी कहते हैं--हे महर्षियों ! एक समय देवराज इन्द्र को देवत्व का अभिमान हो गया । तब प्रभु ने सोचा देवेश्वरों में

ऐसा आसुर भाव उत्पन्न होना उचित नहीं है, अतः इसका परिशमन होना चाहिए । तदनन्तर समस्त व्रजवासियों द्वारा परम्परागत इन्द्रपूजा रुकवा कर गिरिराज-गोवर्द्धन की पूजा करायी। पूजा खण्डित होने से नाराज देवराज इन्द्र ने सांवर्तक मेघों को आज्ञा देकर घनघोर वर्षा से व्रज को डूबाना चाहा, किन्तु श्रीहरि ने अपने बायें हाथ की हथेली पर श्रीगिरिगोवर्धन को सात दिन-सात रात्रि पर्यन्त छत्ते की तरह धारण कर व्रज एवं व्रजवासियों की रक्षा की, यह देखकर इन्द्र ने स्वयं के कृत्य पर पश्चात्ताप करते हुए श्रीकृष्ण से क्षमा याचना की, उन देवाधिदेव श्रीगिरिधरगोपाल की मैं प्रणति पूर्वक शरण ग्रहण करता हूँ ॥१२॥

वेणुवाद्यमहोल्लास--कृतहुङ्कारनिःस्वनैः ।
सवत्सैरुन्मुखैः शश्वद् गोकुलैरभिवीक्षितम् ॥१३॥
कृणमेवानुगायद्भिस्तच्चेष्टावशवर्तिभिः ।
दण्डपाशोद्यतकरैर्गोपालैरुपशोभितम् ॥१४॥

वेणुवादन लीला की विशेषता दर्शाते हैं--लीला पुरुषोत्तम का लीला विलास बड़ा ही विलक्षण है । नन्दनन्दन जब गाय चराते हुए सुदूर वन में पहुँच जाते हैं तब कदम्बतरु की शीतल छाया में विश्राम कर वंशी बजाना प्रारम्भ कर देते हैं त्रिभुवन विमोहनकारी उस वंशीनिनाद को श्रवण कर सम्पूर्ण चराचर जगत् स्तब्ध रह जाता है । गोमाताएँ घास चरना छोड़ देती हैं, बछड़े स्तनपान करना भूल जाते हैं । यमुना की धारा

रुक जाती, गिरिराज की शिलाएँ पिघल जाती हैं, पवन की गति रुक जाती, जलचर-स्थलचर-खेचर प्राणी सभी अलौकिक आनन्दसिन्धु में डूब जाते हैं । उधर बछड़े सहित वे सब गायें ऊपर की ओर मुख करके हुँकार भरती हुई निरन्तर निश्चल भाव से श्रीकृष्ण को ही देखती रहती हैं । एक ओर समस्त ग्वालबाल हाथ में वेंत, रस्सियाँ लिये हुए श्रीकृष्ण की चेष्टाओं का अनुकरण करते हुए उन्हीं का गुणगान करते हैं । ऐसे गोपाल बालकों से घिरे हुए लीलाधारी वृन्दावनविहारी श्रीहरि का मैं भजन करता हूँ ॥१३-१४॥

नारदाद्यैर्मुनिश्रेष्ठैर्वेदवेदाङ्गपारगैः ।
प्रीति-सुस्निग्धया वाचा स्तूयमानं परात्परम् ॥१५॥

ऋग्, यजुः, साम, अथर्व इन चारों वेदों, शिक्षा, कल्प, निरुक्त छन्द, व्याकरण, ज्योतिष इन छओं वेदाङ्गों, षड्दर्शन, पुराणेतिहास, धर्मशास्त्र प्रभृति निखिल शास्त्रों में पारङ्गत नारदादि मुनिश्रेष्ठों द्वारा परमप्रीति पूर्वक मधुर वाणी से जो निरन्तर स्तुति किये जाते हैं, जो निखिलजगदभिन्ननिमित्तोपादान कारण हैं, जो परात्पर परब्रह्म पुराणपुरुषोत्तम गोलोक विहारी हैं उन गोप-रूपधारी श्रीकृष्ण की मैं सर्वात्मभाव से वन्दना करता हूँ ॥१५॥

य एवं चिन्तयेद् देवं भक्त्या संस्तौति मानवः ।
त्रिसन्ध्यं तस्य तुष्टोऽसौ ददातिवरमीप्सितम् ॥१६॥

राजवल्लभतामेति भवेत्सर्वजनप्रियः ।
अचलां श्रियमाप्नोति स वाग्मी जायते ध्रुवम् ॥१७॥

अब इन दो श्लोकों में गोपालस्तवराज के पठन-मनन की फलस्तुति कही जाती है, इस प्रकार जो मुमुक्षु साधक भक्ति-भाव से युक्त होकर प्रातः, मध्याह्न, सायं तीनों समय लीलावपुधारी श्रीकृष्ण का चिन्तन करता हुआ उपर्युक्त स्तोत्र से स्तुति करता है, उसके प्रति अति प्रसन्न होकर प्रभु उसे इच्छानुसार वरदान दे देते हैं। इस प्रकार भगत्कृपा भाजन बना हुआ वह व्यक्ति राजा का भी प्रिय होता है । संसार के सभी मनुष्य उससे प्रेम करते हैं । कभी नष्ट न होने वाली ऐश्वर्य लक्ष्मी प्राप्त कर लेता है और विद्वानों की सभा में युक्तियुक्त बोलने में समर्थ हो जाता है ।

॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

।। श्रीराधा चालीसा ।।

दोहा

श्रीराधे वृषभानुजा, भक्तनि प्राणाधार ।
वृन्दाविपिन विहारिणी, प्रणवों बारम्बार ।।
जैसो तैसो रावरौ, कृष्ण-प्रिया सुखधाम ।
चरण शरण निज दीजिये, सुन्दर सुखद ललाम ।।

चौपाई

जय वृषभान कुँवरि श्री श्यामा ।
कीरति नन्दिनि शोभा धामा ।।
नित्य विहारिनि श्याम अधारा ।
अमित बोध मंगल दातारा ।।
रास विहारिनि रस विस्तारिनि ।
सहचरि सुभग यूथ मन भावनि ।।

नित्य किशोरी राधा गोरी ।
श्याम प्राणधन अति जिय भोरी ॥
करुणा सागरि हिय उमंगनि ।
ललितादिक सखियन की संगनि ॥
दिनकर कन्या कूल विहारिनि ।
कृष्ण प्राणप्रिय हिय हुलसावनि ॥
नित्य श्याम तुम्हरो गुण गावें ।
श्री राधा राधा कहि हर्षावहिं ॥
मुरली में नित नाम उचारें ।
तुम कारण लीला वपु धारें ॥
प्रेम स्वरूपिणि अति सुकुमारी ।
श्याम प्रिया वृषभानु दुलारी ॥
नवल किसोरी अति छबि धामा ।
द्युति लघु लाग कोटि रति कामा ॥
गौरांगी शशि निन्दक वदना ।
सुभग चपल अनियारे नैना ॥

जावक युत पद पङ्कज चरना ।
नूपुर ध्वनि प्रीतम मन हरना ॥
संतत सहचरि सेवा करहीं ।
महा मोद मंगल मन भरहिं ॥
रसिकन जीवन प्राण अधारा ।
राधा नाम सकल सुख सारा ॥
अगम अगोचर नित्य स्वरूपा ।
ध्यान धरत निशिदिन बृजभूपा ॥
उपजेउ जासु अंश गुण खानी ।
कोटिन उमा रमा ब्रह्मानी ॥
नित्य धाम गोलोक बिहारिनि ।
जन रक्षक दुःख दोष नसावनि ॥
शिव अज मुनि सनकादिक नारद ।
पार न पाँय शेष अरु शारद ॥
राधा शुभ गुण रूप उजारी ।
निरखि प्रसन्न होत बनवारी ॥

बृज जीवन धन राधा रानी ।
महिमा अमित न जाय बखानी ॥
प्रीतम संग दिये गल बाहीं ।
बिहरत नित वृन्दावन माहीं ॥
राधा कृष्ण कृष्ण है राधा ।
एक रूप दोउ प्रीति अगाधा ॥
श्रीराधा मोहन मन हरनी ।
जन सुख प्रदा प्रफुल्लित बदनी ॥
कोटिक रूप धरे नन्द नन्दा ।
दरश करन हित गोकुल चन्दा ॥
रासकेलि कर तुम्हें रिझावें ।
मान करो जब अति दुःख पावें ॥
प्रफुल्लित होत दरश जब पावें ।
विविध भाँति नित विनय सुनावें ॥
वृन्दारण्य विहारिणि श्याम ।
नाम लेत पूरण सब कामा ॥

कोटिन यज्ञ तपस्या करहू ।
विविध नेम वृत हिय में धरहू ॥
तउ न श्याम भक्तहि अपनावें ।
जब लगि नाम न राधा गावें ॥
वृन्दा विपिन स्वामिनी राधा ।
लीला वपु तुव अमित अगाधा ॥
स्वयं कृष्ण नहिं पावहिं पारा ।
और तुम्हें को जाननि हारा ॥
श्रीराधा रस प्रीति अभेदा ।
सादर गान करत नित वेदा ॥
राधा त्यागि कृष्ण जो भजिहै ।
ते सपनेहुँ जग जलधि न तरिहै ।
कीरति कुमरि लाड़िली राधा ।
सुमिरत सकल मिटहिं भव बाधा ॥
नाम अमंगल मूल नसावनि ।
विविध ताप हर हरि मन भावनि ॥

राधा नाम लेय जो कोई ।
सहजहि दामोदर वश होई ॥
राधा नाम परम सुखदाई ।
सहजहिं कृपा करें यदुराई ॥
यदुपति नन्दन पीछे फिरिहैं ।
जो कोऊ राधा नाम सुमिरिहैं ॥
रास विहारिन श्यामा प्यारी ।
करहु कृपा वरसाने वारी ॥
वृन्दावन है शरण तुम्हारी ।
जै जै जै वृषभानु दुलारी ॥

दोहा

राधा चालीसा पढै, नित्य नियम मन लाय।
लहै सदा सेवा सरस, परम-धाम पद पाय॥

॥ श्रीगोपाल चालीसा ॥

श्रीराधा-पदकमल रज, सिर धरि जमुना कूल।
वरनों चालीसा सरस, सकल सुमंगल मूल ॥

चौपाई

जै जै पूरन ब्रह्म बिहारी ।
दुष्ट दलन लीला अवतारी ॥
जो कोई तुम्हरी लीला गावै ।
बिन श्रम सकल पदारथ पावै ॥
श्री वसुदेव देवकी माता ।
प्रगट भये संग हलधर भ्राता ॥
मथुरा सौं प्रभु गोकुल आये ।
नन्द-भवन में बजत बधाये ॥
जो विष देन पूतना आई ।
सो मुक्ती दै धाम पठाई ॥
तृणावर्त राक्षस संहार्‌यौ ।
पग बढाय सकटासुर मार्‌यौ ॥

खेल-खेल में माटी खाई ।
मुख में सब जग दियौ दिखाई॥
गोपिन के घर-घर माखन खायो।
जसुमति बाल केलि सुख पायो॥
ऊखल सौं निज अंग बँधाई ।
यमलार्जुन जड़ योनि छुड़ाई॥
बका असुर की चोंच विदारी ।
विकट अघासुर दियो सँहारी ॥
ब्रह्मा बालक वत्स चुराये ।
मोहन को मोहन हित आये ॥
बाल वत्स सब बने मुरारी ।
ब्रह्मा विनै करी तब भारी ॥
काली-नाग नाथि भगवाना ।
दावानल नल कीन्हीं पाना ॥
सखन संग सुख खेलत पायो ।
श्रीदामा निज कन्ध चढ़ायो ॥

चीर हरन करि सीख सिखाई ।
नख पर गिरवर लियो उठाई ॥
दरस यग्य पत्निन को दीन्हौं ।
राधा प्रेम सुधा सुख लीन्हौं ॥
नन्दहिं वरुनलोक सों लाये ।
ग्वालन को निजलोक दिखाये ॥
सरद-चन्द्र लखि वेणु बजाई ।
अति सुख दीन्हौं रास रचाई ॥
अजगर सों पितुचरन छुड़ायो ।
संखचूड़ को मूड़ गिरायो ॥
हने अरिष्टा-सुर अरु केसी ।
ब्योमासुर मार्‍यौ छल वेसी ॥
ब्याकुल ब्रज तजि मथुरा आये ।
मारि कंस यदुवंस बसाये ॥
मात पिता की बन्दि छुड़ाई ।
सान्दीपनि गृह विद्या पाई ॥

पुनि पठयौ ब्रज ऊधो ग्यानी ।
प्रेम देखि सुधि सकल भुलानी ॥
कीन्ही कुबरी सुन्दर नारी ।
हरि लाये रुक्मिनि सुकुमारी ॥
भौमासुर हनि भक्त छुड़ाये ।
सुरन जीति सुरतरु महि लाये ॥
दन्तवक्र सिसुपाल संहारे ।
खग मृग नृप अरु बधिक उधारे ॥
दीन सुदामा धनपति कीन्हौं ।
पारथ रथ सारथि जस लीन्हौं ॥
गीता ग्यान सिखावन हारे ।
अर्जुन मोह मिटावन हारे ॥
केला भक्त बिदुर घर पायो ।
युद्ध महाभारत रचवायो ।
द्रुपद सुता को चीर बढ़ायो ।
गर्भ परीक्षित जरत बचायो ॥

कच्छ मच्छ बाराह अहीसा ।
बामन कल्की बुद्ध मुनीसा ॥
है नरसिंह प्रह्लाद उबार्‌यो ॥
रामरूप धरि रावन मार्‌यो ॥
जै मधु कैटभ दैत्य हनैया ।
अम्बरीष त्रिय चक्र धरैया ॥
व्याध अजामिल दीन्हैं तारी ।
शबरी अरु गणिका सी नारी ॥
गरुड़ासन गज फन्द निकन्दन ।
देंहु दरस ध्रुव नयनानन्दन ॥
देहु शुद्ध सन्तन कर संगा ।
बाढ़ै प्रेम भक्ति रस रंगा ॥
देहु दिव्य वृन्दावन बासा ।
छूटे मृग तृष्णा जग आसा ॥
तुम्हरो ध्यान धरत सिव नारद ।
सुक सनकादिक ब्रह्म विसारद ॥

जै-जै राधारमन कृपाला ।
हरन सकल संकट भ्रम जाला ॥
विनसैं विघन रोग दुख भारी ।
जो सुमिरैं जगपति गिरधारी ॥
जो सत बार पढ़ै चालीसा ।
देहि सकल वांछित फल श्रीसा ॥

* छन्द *

गोपाल चालीसा पढ़ै नित नेम सौं चित्त लावई ।
सो दिव्य तन धरि अन्त महँ गोलोकधाम सिधावई ॥
संसार सुख संपति सकल जो भक्तिजन मन महँ चहैं।
''जयरादेव'' सदैव सो गुरुदेव दाया सौं लहैं ॥

* दोहा *

प्रणत पाल असरन सरन, करुना-सिन्धु ब्रजेस ।
चालीसा के संग मोहिं, अपनावहु प्रानेस ॥

* दोहा *

राधा मेरी स्वामिनी, मैं राधे को दास ।
जनम-जनम मोहिं दीजियो, श्रीवृन्दावन वास ॥१॥
राधा-राधा नाम को, सपनेहूँ जो लेय ।
ताको मोहन साँवरो, रीझि अपन को देय ॥२॥
मेरी भव-बाधा हरौ, राधा नागरि सोय ।
जा तन की झाँई परै, स्याम हरित-द्युति होय ॥३॥
धन वृन्दावन धाम है, धन वृन्दावन नाम ।
धन वृन्दावन रसिक जो, सुमिरे स्यामा-स्याम ॥४॥
वृन्दावन के वृक्ष को, मरम न जानै कोय ।
डार-डार अरु पात-पात में, राधे-राधे होय ॥५॥
राधे-राधे रटत ही, सब बाधा मिट जाय ।
कोटि जनम की आपदा, राधा नाम ते जाय ॥६॥
राधा-राधा जे कहैं, ते न परैं भव-फंद ।
जासु कंध पै कमल कर, धरे रहत ब्रज चन्द ॥७॥
राधा-राधा कहत हैं, जे नर आठों याम ।
ते भव-सिंधु उलंघि के, बसत सदा ब्रज धाम ॥८॥
काहू के बल भजन को, काहू के आचार ।
व्यास भरोसे कुँवरि के, सोवत पाँव पसार ॥९॥
राधा श्रीराधा रटूँ, निसि-दिन आठों याम ।
जा उर श्रीराधा बसै, सोई हमारो धाम ॥१०॥
सब द्वारन को छाँडि कै, आयौ तेरे द्वार ।
अहो भान की लाड़िली, मेरी ओर निहार ॥११॥

जै-जै राधारमन कृपाला ।
हरन सकल संकट भ्रम जाला ॥
विनसैं विघन रोग दुख भारी ।
जो सुमिरैं जगपति गिरधारी ॥
जो सत बार पढ़ै चालीसा ।
देहि सकल वांछित फल श्रीसा ॥

* छन्द *

गोपाल चालीसा पढ़ै नित नेम सौं चित्त लावई ।
सो दिव्य तन धरि अन्त महँ गोलोकधाम सिधावई॥
संसार सुख संपति सकल जो भक्तिजन मन महँ चहैं।
''जयरादेव'' सदैव सो गुरुदेव दाया सौं लहैं ॥

* दोहा *

प्रणत पाल असरन सरन, करुना-सिन्धु ब्रजेस ।
चालीसा के संग मोहिं, अपनावहु प्रानेस ॥

* दोहा *

राधा मेरी स्वामिनी, मैं राधे को दास ।
जनम-जनम मोहिं दीजियो, श्रीवृन्दावन वास ।।१।।
राधा-राधा नाम को, सपनेहूँ जो लेय ।
ताको मोहन साँवरो, रीझि अपन को देय ।।२।।
मेरी भव-बाधा हरौ, राधा नागरि सोय ।
जा तन की झाँई परै, स्याम हरित-द्युति होय ।।३।।
धन वृन्दावन धाम है, धन वृन्दावन नाम ।
धन वृन्दावन रसिक जो, सुमिरे स्यामा-स्याम ।।४।।
वृन्दावन के वृक्ष को, मरम न जानै कोय ।
डार-डार अरु पात-पात में, राधे-राधे होय ।।५।।
राधे-राधे रटत ही, सब बाधा मिट जाय ।
कोटि जनम की आपदा, राधा नाम ते जाय ।।६।।
राधा-राधा जे कहैं, ते न परैं भव-फंद ।
जासु कंध पै कमल कर, धरे रहत ब्रज चन्द ।।७।।
राधा-राधा कहत हैं, जे नर आठों याम ।
ते भव-सिंधु उलंघि के, बसत सदा ब्रज धाम ।।८।।
काहू के बल भजन को, काहू के आचार ।
व्यास भरोसे कुँवरि के, सोवत पाँव पसार ।।९।।
राधा श्रीराधा रटूँ, निसि-दिन आठों याम ।
जा उर श्रीराधा बसै, सोई हमारो धाम ।।१०।।
सब द्वारन को छाँडि कै, आयौ तेरे द्वार ।
अहो भान की लाड़िली, मेरी ओर निहार ।।११।।

ब्रज चौरासी कोस में, चार गाम निज धाम ।
वृन्दावन अरु मधुपुरी, वरसानो नँदगाम ।।१२।।
मोर मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल ।
यह बानिक मो उर बसौ, सदा बिहारीलाल ।।१३।।
कर लकुटी मुरली गहें, घूँघरवारे केस ।
यह बानिक मो हिय बसौ, स्याम मनोहर वेस ।।१४।।
मैं नहिं देखूँ और को, मोय न देखैं और ।
मैं नित देख्योई करूँ, तुम दोउन सब ठौर ।।१५।।
अमी हलाहल मद भरे स्वेत स्याम रतनार ।
जियत–मरत झुकि–२ परत, जिहि चितवत इकबार।।१६
आऔ प्यारे मोहना, पलक झाँप. तोहि लेउँ ।
ना मैं देखूँ और कौ, ना तोहि देखन देउँ ।।१७।।
मोहनि मूरति स्याम की, मो मन रही समाय ।
ज्यौं मेंहदी के पात में, लाली लखी न जाय ।।१८।।
लाली मेरे लालकी, जित देखूँ तित लाल ।
लाली देखन मैं गई, मैं भी ह्वै गई लाल ।।१९।।
चलो सखी तहाँ जाइये, जहाँ बसे ब्रजराज ।
गोरस बेचत हरि मिले, एक पंथ द्वै काज ।।२०।।
मेरे प्यारे मोहना, वंसी नेक बजाय ।
तेरी वंसी मन हर्‌यौ, घर अँगना न सुहाय ।।२१।।
दसन पाँति मोंतियन लरी, अधर ललाई पान ।
ताहू पै हँसि हेरिवौ, को लखि बचै सुजान ।।२२।।
मृदु मुसक्यान निहारि के, धीर धरत है कौन ।
नारायन कै तन तजै, कै बौरा कै मौन ।।२३।।

लतन तरे ठाडो कबहू, कबहू जमुना तीर ।
नारायन नैंनन बसी, मूरति स्याम शरीर ॥२४॥
कजरारी अँखियन में, बस्यौ रहत दिन-रात ।
प्रीतम प्यारो हे सखी, ताते साँवल गात ॥२५॥
प्रीतम छवि नैंनन बसी, पर छबि कहाँ समाय ।
भरी सराय रहीम लखि, आप पथिक फिरि जाय ॥२६॥
कबिरा काजर रेखहू, अब तो दई न जाय ।
नैनन प्रीतम रमि रह्यौ, दूजौ कहाँ समाय ॥२७॥
या अनुरागी चित्त की, गति समुझै नहिं कोय ।
ज्यौं-ज्यौं डूबे स्याम रँग, त्यौं त्यौं उज्वल होय ॥२८॥
कीच लगी व्रज खिरक की, इन गलियन की धूर ।
अंग लगी जानी जबै, भाजि गए जम दूर ॥२९॥
जमुना-जल अँचवन करैं, जमुना जल में न्हाहिं ।
जहाँ-जहाँ जमुना बहै, तहाँ-तहाँ जम नाहिं ॥३०॥
कामधेनु कलपत रही, हौं न भई ब्रज गाय ।
राधा देती दोहनी, मोहन दुहते आय ॥३१॥
तीन लोक चौदह भुवन, भोजन पुजवत जोय ।
द्वारें देख्यौ नन्द के, माँगत माखन रोय ॥३२॥
बाल कृष्ण माखन लिएँ, करत तोतरी बात ।
हरैं-हरैं घुटुअन चलत, देखत नैंन सिरात ॥३३॥
जाके मन में बस रही, मोहन की मुसक्यान ।
नारायन ताके हिये, और न लागत ग्यान ॥३४॥
वृन्दावन में बास कर, साग-पात नित खात ।
तिनके भागन को निरख, ब्रह्मादिक ललचात ॥३५॥

ब्रह्मादिक के भोग सुख, विष सम लागत ताहि ।
नारायन ब्रजचन्द्र की, लगन लगी है जाहि ।।३६।।
अहो राधिके स्वामिनी, गोरी परम दयाल ।
सदा बसौ मेरे हिये, करिके कृपा कृपाल ।।३७।।
काहू कौं जानो न मैं, ना मोहिं जाने कोय ।
तुमसौं प्रीति लगी रहै, हम तुम जानें दोय ।।३८।।
श्रीराधा सर्वेश्वरी, रसिकेस्वर घनस्याम ।
करहुँ निरंतर बास मैं, श्री वृन्दावन धाम ।।३९।।
अहो किसोरी स्वामिनी, गोरी परम दयाल ।
तनिक कृपा की कोर लखि, कीजै मोहिं निहाल ।।४०।।
कहि न जाय मुख सौं कछू, स्याम प्रेम की बात ।
नभ-जल-थल-चर-अचर-सब, स्यामहि स्याम लखात।।४१।।
ब्रह्म नहीं माया नहीं, नहीं जीव नहिं काल ।
अपनीहू सुधि ना रही, रह्यौ एक नँदलाल ।।४२।।
नारायन जाके हृदय, सुन्दर स्याम समाय ।
डार-पात फल-फूल में, ताकौ वहि लखाय ।।४३।।
दर दिवार दरपन भए, जित देखौं तित तोहि ।
काँकर-पाथर-ठीकरी, भये आरसी मोहि ।।४४।।
ग्यानी वोध स्वरूप है, होहि ब्रह्म में लीन ।
निरखत पै लीला मधुर, प्रेमी प्रेम प्रवीन ।।४५।।
ग्यानी ढिंग गंभीर हरि, सत-चित-ब्रह्मानद ।
प्रेमी सँग खेलत सदा, चंचल प्रेमानन्द ।।४६।।
ग्यानी ब्रह्मानन्द -सौं, रहत सदा भर-पूर ।
पै प्रेमी निरखत सुखद, दुरलभ हरि को नूर ।।४७।।

प्रेमी भाग्य सराहि मुनि, ग्यानी विमल विवेक ।
चहैं सुदुरलभ प्रेमपद, तजि निजपद की टेक ।।४८।।
प्रथम सीस अरपन करै, पाछे करै प्रवेस ।
ऐसे प्रेमी सुजन को, है प्रवेस यहि देस ।।४९।।
स्वर्ग-मोच्छ चाहै नहीं, चाहै नंद किसोर ।
सुघढ़ सलौनी साँवरो, मुरलीधर मन चोर ।।५०।।
जिनके दृग हरि-रँगरंगे, हिय हरि रहे समाय ।
नव-जल अवनि-अनिल, सबमें स्याम दिखाय ।।५१।।
कबिरा खड़ा बजार में, लिये लकुटी हाथ ।
जो घर फूँके आपना, चलै हमारे साथ ।।५२।।
जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं ।
प्रेम गली अति साँकरी, ता में दो न समाहिं ।।५३।।
ढूँढा सब जहाँ में, पाया पता तेरा नहीं ।
जब पता तेरा लगा, अब पता मेरा नहीं ।।५४।।
तूँ तूँ करता तूँ भया, मुझ में रही न हूँ ।
वारी तेरे नाम पै, जित देखूँ तित तूँ ।।५५।।
कछु माखन को बल बढ्यौ, कछु गोपन करी सहाय ।
श्री राधे जू की कृपा सौं, गोवर्धन लियो उठाय ।।५६।।
श्री गुरु श्रीगोबिंद पद, मंगलहित करूँ ध्यान ।
मंगल श्री ब्रजराज घर, जो पाऊँ सनमान ।।५७।।
गोपी ओपी जगत में, जिनकी उलटी रीति ।
तिनके पग-वंदन करूँ, करी कृष्ण सौं प्रीति ।।५८।।
हाथ जोरि विनती करों, सुनौ गरीब निवाज ।
अपनो ही कर जानियो, बाँह गहे की लाज ।।५९।।

नंदराय के लाड़िले, भक्तन प्रान अधार ।
भक्तराम के उर बसौ, पहिरे फूलन हार ।।६०।।
तिन पर भ्रमर समान नित, अहक रहै मन मोर ।
भक्तराम कबहूँ नहीं, चितवैं काहू ओर ।।६१।।
नागरिया नव नागरी, खेलत रास विलास ।
पल-पल वारौं हे सखी, नित नव नागरिदास ।।६२।।
मुरली मदन गुपाल की, बाजत गहर गँभीर ।
कृष्णदास बाजत सुनी, कालिंदी के तीर ।।६३।।
मुक्ति कहै गोपाल सौं, मेरी मुक्ति बताय ।
व्रजरज उड़ि मस्तक लगै, मुक्ति मुक्त है जाय ।।६४।।
नारायन ब्रज भूमि को, सुरपति नावैं माथ ।
जहाँ आय गोपी भये, श्री गोपीस्वरनाथ ।।६५।।
राधे ! मेरी लाड़िली, मेरी ओर तू देख ।
मैं तोहि राखौं नैंन में, काजर की सी रेख ।।६६।।
राधे जू के बदन पैं, बेंदी अति छबि देय ।
मानों फूली केतकी, भ्रमर बासना लेय ।।६७।।
गोरे मुख पै तिल बन्यौ, ताहि करूँ परनाम ।
मानों चंद्र बिछाय कै, पौढ़े सालिग्राम ।।६८।।
लट छूटी तिय सीस तें, वहि कपोल लपटाय ।
मानों छौना नाग को, पी पी अमी अघाय ।।६९।।
व्रजवासी बल्लभ सदा, मेरे जीवन प्रान ।
इन्हैं न नेक बिसारि हौं, मोहिं नँदबाबा की आन ।।७०।।
ब्रज तज अनत न जाइहौं, मेरे है यह टेक ।
भूतल भार उतारिहौं, धरिहौं रूप अनेक ।।७१।।

मैं बेटी वृषभानु की, राधा मेरौ नाम ।
तीन लोक में गाइये, बरसानौ नंदगाम ।।७२।।
एरे कठिन अहीर के, नेक पीर पहिचान ।
तब मुख दरसन कारनै, छाँड़ि दई कुलकान ।।७३।।
कर मुरली लकुटी गहे, घूँघरवारे केस ।
यह बानिक नैंनन बसौ, स्याम मनोहर वेस ।।७४।।
मनमोहन मनमोहना, मनमोहन मन माहिं ।
या मोहन ते सोहना, तीन लोक में नाहिं ।।७५।।
मोर मुकुट की लटक पर, अटक रहे दृग मोर ।
कान्ह कुँवरि जमुना तट, नटवर नंदकिसोर ।।७६।।
वृन्दावन बानिक बन्यौ, भ्रमर करत गुंजार ।
दुलहिन प्यारी राधिका, दुलह नंदकुमार ।।७७।।
ब्रज चौरासी कोस में, चार गाम निज धाम ।
वृन्दावन अरु मधुपुरी, बरसानौ नंदगाम ।।७८।।
ब्रज समुद्र मथुरा कमल, वृन्दावन मकरंद ।
ब्रजवनिता सब पुष्प हैं, मधुकर गोकुलचन्द ।।७६।।
उत उरझी कुंडल अलक, इत बेसर बनमाल ।
गौर-स्याम उरझे दोऊ, मंडल रास रसाल ।।८०।।
प्रेम सरोवर प्रेम की, भरी रहै दिन रैन ।
जहँ-जहँ प्यारी पग धरैं, लाल धरैं दोउ नैन ।।८१।।
मोरमुकुट की निरखि छबि, लाजत मदन करोर ।
चन्द्र वदन सुख सदन पै, भावुक नैंन चकोर ।।८२।।
कमलन की रवि एक है, रवि को कमल अनेक ।
हमसे तुमको बहुत है, तुमसे हमको एक ।।८३।।

जल में बसै कुमोदिनी, चंदा बसैं अकास ।
जो जाके मन में बसै, बसै सो ताके पास ।।८४ ।।
महारानी श्रीराधिका, अष्ट सखिन के झुंड ।
डगर बुहारत साँवरो, जै जै राधाकुंड ।।८५ ।।
मोहन नैंना आपके, नौका के आकार ।
जो जन इनमें बस गये, हो गये भव से पार ।।८६ ।।
इष्ट मिल अरु मन मिले, मिले भजन रस रीति ।
मिलिये ताहि निसंक ह्वै, कीजै तिन सौं प्रीति ।।८७ ।।
बहुत मिले सो संग नहिं, न्यारी-न्यारी भाँति ।
जुगल-प्रेम रस मगन जे, तेई अपनी पाँति ।।८८ ।।
बहुत भाँति के मत जहाँ, तिनहिं न समुझै संग ।
नव किसोरता माधुरी, बिना न अपनौ रंग ।।८९ ।।
विस्व भरन पोषन करन, कल्प तरोवर नाम ।
सो प्रभु दधि चोरी करत, प्रेम विवस भगवान ।।९० ।।
जहँ प्रियतम तिहिं देस की, प्यारी लागत पौन ।
प्रेम छटा जानै बिना, यह सुख समझै कौन ।।९१ ।।
कबिरा हँसन दूर कर, रोने से कर प्रीति ।
बिन रोये नहिं पाइये, प्रेम पियारी मीत ।।९२ ।।
हँसि-हँसि कंत न पाइया, जिन पाया तिन रोय ।
हँसि खेलैं पिय मिलैं तौ, कौन दुहागिन होय ।।९३ ।।
बंधे पेंच के पच पर, पेंच-पेंच में पेंच ।
फिर निकसे सरकै न मन, ऐसे पेंच कुपेंच ।।९४ ।।
जो वन जानहि चहौ तुम, दऊं मैं छत्र धराय ।
लेहु पहर पग पादुका, तब मोहिं धीरज आय ।।९५ ।।

स्वधर्म हमारो है यही, गोधन सेवा हम करें ।
उनके छत्र न पादुका, तो हम कहौ कैसे धरैं ।।९६।।
गो-धन पीछे गोप हैं, आगे उनहिं धराऔ ।
देव उधारे तन फिरै, तो काहे दास सजावौ ।।९७।।
संग सोई जाके मिले, भूलै ग्रह व्यौहार ।
तिहि छिन आवें हिये में, अद्भुत जुगल बिहार ।।९८।।
जिनके जुगल बिहार की, बात चलै दिन-रैन ।
तिनही को संग कीजिए, छाँड़ि और सब गैन ।।९९।।
नवल किसोरी कुँवरि की, सहजहिं ऐसीं बान ।
ताकौ संग न छाँडहीं, नेकु सरन गहै आन ।।१००।।
वृन्दावन दुतिपत्र की, उपमा कौं कछु नाहिं ।
कोटि-कोटि बैकुंठ से, इहि सम कहे न जाहिं ।।१०१।।
लता-लता सब कल्पतरु, पारिजात सब मूल ।
सहज पक रस रहत हैं, झलकत जमुना-कूल ।।१०२।।
न्यारौ है सब लोक तें, वृन्दावन निज गेह ।
खेलत लाड़िली लाल जहाँ, भीजैं सरस सनेह ।।१०३।।
गौर-स्याम तन मन रँगे, प्रेम स्वाद रस सार ।
निकसत नहिं तिहि ऐन ते, अटके सरस बिहार ।।१०४।।
ऐसे रस में दिन मगन, नहिं जानत निसि-भोर ।
वृन्दावन में प्रेम की, नदी बहै चहुँ ओर ।।१०५।।
पत्र-फूल-फल-लता प्रति, रहत रसिक पिय चाहि।
नवल कुँवरि दृग छटा जल, तिहि कर सीचैं आहि ।।१०६।।
कुँवरि चरन अंकित धरनि, देखत जिहि-जिहि ठौर ।
प्रिया चरन रज जानिकै, लुठत रसिक सिरमौर ।।१०७।।

श्री पति श्रीमुख कमल सौं, नारद को समुझाइ ।
वृन्दावन रस सबन तें, राख्यौ दूरि दुराइ ।।१०८।।
सिव–विधि उद्धव सबन के, यह आसा हे चित्त ।
गुल्म–लता ह्वै सिर धरै, वृन्दावन–रज नित्त ।।१०६।।
वृन्दावन के बसत ही, अन्तर करै जो आन ।
तिहि सम शत्रु न ओर कोउ, मन–बच कै यह जानि ।।११०
और देस के बसत ही, अधिक भजन जो होइ ।
इहि सम नहिं पूजत तऊ, वृन्दावन रहै सोइ ।।१११।।
वृन्दावन में जो कबहुँ, भजन कछू नहिं होय ।
रज तो उड़ि लागै तनहिं, पीबै जमुना–तोय ।।११२।।
वृन्दा विपिन प्रभाव सुनि, अपनौ ही गुन देत ।
जैसे बालक मलिन कौं, मात गोद भरि लेत ।।११३।।
और ठौर जो जतन करै, होत भजन तउ नाहिं ।
(इहाँ) फिरत स्वारथ आपने, भजन फिरै गहे बाँहि ।।११४
और देस के बसत ही, घटत भजन की बात ।
वृन्दावन में स्वारथहिं, उलटि भजन ह्वै जात ।।११५।।
बसि के वृन्दाविपिन में, ऐसी मन में राख ।
प्रान तजौं बन ना तजौं, कहौ बात कोउ लाख ।।११६।।
चलत–फिरत सुनियत यहै, (श्री) राधाबल्लभलाल ।
ऐसे वृन्दा–विपिन में, बसत रहौ सब काल ।।११७।।
खंड–खंड ह्वै जाइ तन, अंग–अंग सत टूक ।
वृन्दावन नहि छाँडिये, छाँड़िवो है बड़ि चूक ।।११८।।
तजि कै वृन्दा–विपिन कौं, और तीर्थ जे जात ।
छाँड़ि बिमल चिंतामनी, कौड़ी कौं ललचात ।।११६।।

जीरन पट, अति दीन लट, हिये सरस अनुराग ।
बिबस सघन बन में फिरै, गावत जुगल सुहाग ।।१२०।।
ऐसी गति ह्वै है कबहुँ, मुख निसरत नहिं बैन ।
देखि-देखि वृन्दाविपिन, भरि-भरि ढारै नैन ।।१२१।।
कुंवरि किसोरी नाम सौं, उपज्यौ दृढ़ विस्वास ।
करुनानिधि मृदु चित्त अति, ताते बढी जिय आस ।।१२२
जिनकौ वृन्दा-विपिन है, कृपा तिनहि की होइ ।
वृंदावन में तबहिं तौं, रहन पाइ है सोइ ।।१२३।।
बसिकै वृन्दाविपिन में, इतनौ बड़ौ सयान ।
जुगल चरन के भजन बिन, निमिष न दीजै जान ।।१२४।।
न्यारौ चौदह लोक तैं, वृन्दावन निज भौंन ।
तहाँ न कबहु लगत है, महा-प्रलय की पौन ।।१२५।।
कदम कुंज ह्वै हों कबै, श्री वृन्दावन माँहि ।
ललित किसोरी लाडिले, बिहरेंगे तिहिं छाँहिं ।।१२६।।
कब हौं सेवा-कुंज में, ह्वै हौं स्याम तमाल ।
लतिकाकार गहि बिरमि हैं, ललित लड़ैती लाल ।।१२७।।
सुमन बाटिका बिपिन में, ह्वै हौं कब हौं फूल ।
कोमल कर दोउ भाँवते, धरिहैं बीन दूकूल ।।१२८।।
कालीदह कब कूल की, ह्वै हौं त्रिविध समीर ।
जुगल अंग-अंग लागि हौं, उड़ि हैं नूतन चीर ।।१२९।।
मिलिहैं कब अंग छार ह्वै, श्री बन-बीथिन धूर ।
परिहैं पद-पंकज जुगल, मेरी जीवन मूर ।।१३०।।
कब गह्वर की गलिन में, फिरि हौं होय चकोर ।
जुगल चंद मुख निरखि हौं, नागरि नवल किसोर ।।१३१।।

कब कालिंदी कूल की, ह्वै हों तरुवर डार ।
ललित किसोरी लाड़िली, झूले झूला डार ।।१३२।।
स्यामा पद दृढ गह सखी, मिलि हैं निस्चय स्याम ।
ना माने दृग देख लै, स्यामा पद बिच स्याम ।।१३३।।
जोग–ध्यान आवैं नहीं, जग्य भाग ना लेयँ ।
ताको ब्रज की गोपिका, हँसि–हँसि माखन देयँ ।।१३४।।
जा ब्रज–रज के परस ते, मुक्ति मिलत हैं चार ।
सो ब्रजबाला वधू, डारत डगर बुहार ।।१३५।।
नैंना बड़े गरीब हैं, रहत पलक की ओट ।
बरजे ते मानैं नहीं, करत लाख में चोट ।।१३६।।
वेद भेद जाने नहीं, नेति–नेति कहि बैन ।
ता मोहन पे राधिका, कहे महावर दैन ।।१३७।।
सीस काटि भूई धरे, ता पे राखे पाँव ।
इस्क चमन के बीच में, ऐसा हो तो आव ।।१३८।।
नारायन प्रीतम निकट, सोई पहुँचन हार ।
गेंद बनावै सीस की, खेलै बीच बजार ।।१३९।।
वृन्दावन में पर रहौ, देखि बिहारी रूप ।
तासु बराबर को करै, सब भूपन कौ भूप ।।१४०।।
रसना कटौ जु अन रटौं, निरखि अन फुटौ नैन ।
श्रवन फुटौ जु अनसुनौ, बिन राधा जसु बैन ।।१४१।।
सब सौं हित निष्काम मति, वृन्दावन विश्राम ।
राधाबल्लभ लाल कौ, हृदय ध्यान मुख नाम ।।१४२।।
मन लीनौ प्यारे चितै, पै छटाक नहिं देत ।
यहै कहा पाटी पढे, करको पाछो लेत ।।१४३।।

* दरबार में राधारानी के *

दरबार में राधारानी के, दुख दर्द मिटाये जाते हैं ।
दुनिया के सताये लोग यहाँ, सीने से लगाये जाते हैं ।।
संसार नहीं है रहने को, यहाँ दुख ही दुख है सहने को ।
भर–भर के प्याले अमृत के, यहाँ रोज पिलाये जाते हैं।।
दरबार में राधारानी के ।।१।।
पलपल में आस निरास भई, दिन–दिन घटती पलपल बड़ती
दुनिया जिसको ठुकरा देती, वह गोद बिठाये जाते हैं ।।
दरबार में राधारानी के ।।२।।
जो राधा–राधा कहते हैं, वह प्रियासरन में रहते हैं ।
करती हैं कृपा वृषभानुसुता, वही महल बुलाये जाते हैं।।
दरबार में राधारानी के ।।३।।
वो कृपामयी कहलाती है, रसिकों के मन को भाती है।
दुनिया में जो बदनाम हुए, पलकों पै बिठाये जाते हैं ।।
दरबार में राधारानी के ।।४।।

❋ श्रीकृष्ण स्तुति ❋

भये प्रगट गोपाला दीनदयाला यशुमति के हितकारी ।
हरषित महतारी रूप निहारी मोहन मदन मुरारी ॥
कंसासुर जाना मन अनुमाना पूतना वेग पठाई ।
तेहिं हरषित धाई मन मुसुकाई गई जहाँ यदुराई ॥
तेहिं जाय उठाई हृदय लगाई पयधर मुख में दीन्यौ ।
तब कृष्ण कन्हाई मन मुसकाई प्रान तासु हरि लीन्यौ ॥
जब इन्द्र रिसाई मेघ पठाई बस कर ताहि मुरारी ।
गउअन हितकारी सुरमुनि झारी नखपर गिरवर धारी ॥
कंसासुर मारे अति हंकारे बच्छासुर संहारे ।
बकासुर आयो बहुत डरायो ताको वदन विदारे ॥
अतिदीन जानी प्रभु चक्रपानी ताहि दीन निज लोका ।
ब्रह्मा सुर आये अति सुख पाये मगन भये गये सोका ॥
यह छन्द अनूपा है रस रूपा जो नर याकूँ गावै ।
तहिसम नहिं कोई त्रिभुवन सोई मनवांछित फल पावै ॥

* दोहा *

नन्द जसोदा तप कियौ, मोहन सौं मन लाय ।
देखन चाहत बाल सुख, रहैं कछुक दिन जाय ॥
जेहिं नक्षत्र मोहन भये, सो नक्षत्र पर आय ।
चारु बधाई रीत सब करति जसोदा माय ॥

॥ राधावर कृष्णचन्द्र की जय ॥

आरती श्रीराधिकाजी

आरती श्रीवृषभानुललीकी ।

सत-चित-आनँद-कन्द-कलीकी ।।टेक।।

भयभंजिनि भव-सागर-तारिणी,

पाप-ताप-कलि-कल्मष-हारिणि,

दिव्यधाम गोलोक-विहारिणि,

जनपालिनि जगजननि भलीकी ।।१ ।।

अखिल विश्व-आनन्द-विधायिनि,

मंगलमयी सुमंगलदायिनी, नंदनँदन-पदप्रेम प्रदायिनि,

अमिय-राग-रस रंग-रलीकी ।।२ ।।

नित्यानन्दमयी आह्लादिनि,

आनँदघन-आनंद-प्रसाधिनि,

रसमयि, रसमय-मन-उन्मादिनि,

सरस कमलिनी कृष्ण-अलीकी ।।३ ।।

नित्य निकुंजेश्वरि रासेश्वरि,

परम प्रेमरूपा परमेश्वरि,

गोपिगणाश्रयि गोपिजनेश्वरि,

विमल विचित्र भाव-अवलीकी ।।४ ।।

*

गाए जा राधे - राधे

भजे जा राधे - राधे ! कहे जा राधे - राधे ।
श्रीवृन्दावन–धाम अपार, रटे जा राधे - राधे ॥१॥
वृन्दावन गलियाँ डोले, श्रीराधे - राधे बोले ।
वाको जनम सफल हो जाय, रटे जा राधे - राधे ॥२॥
या व्रज की रज सुन्दर है, देवन को भी दुर्लभ है ।
मुक्ता - रज शीश चढ़ाय, रटे जा राधे - राधे ॥३॥
ये वृन्दावन की लीला, नहीं जाने गुरु या चेला ।
ऋषि - मुनि गये सब हार, रटे जा राधे - राधे ॥४॥
वृन्दावन रास रचायो, शिव गोपी रूप बनायो ।
सब देवन करें विचार, रटे जा राधे - राधे ॥५॥
जो राधे - राधे रटतो, दुःख जनम–जनम को कटतो ।
तेरो बेड़ो होतो पार, रटे जा राधे - राधे ॥६॥
जो राधे - राधे गावे, सो प्रेम पदारथ पावे ।
भव - सागर होवे पार , रटे जा राधे - राधे ॥७॥
जो राधा नाम न गायो, सो बिरथा जनम गवाँयो ।
वाको जीवन है धिक्कार, रटे जा राधे - राधे ॥८॥
जो राधा- जनम न होतो, रसराज बिचारो रोतो ।
होतो न कृष्ण अवतार, रटे जा राधे - राधे ॥९॥
मंदिर की शोभा न्यारी, यामें राजत राजदुलारी ।
ड्योढ़ी पर ब्रह्मा राजे, रटे जा राधे - राधे ॥१०॥
जेहि वेद पुराण बखाने, निगमागम पार न पाने ।
खड़े वे राधे के दरबार, रटे जा राधे - राधे ॥११॥
तू माया देख भुलाया, वृथा ही जनम गवाँया ।
फिर भटकेगो संसार, रटे जा राधे - राधे ॥१२॥

जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य
श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्यजी महाराज

जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर
श्रीश्यामशरणदेवाचार्यजी महाराज

भक्तिश्च भक्तो भगवान् गुरुश्च, नामानि चत्वारि शरीरमेकम्।
तत्पादपङ्केरुहवन्दनेन, समस्त-विघ्नाः शमनं प्रयान्ति॥